(5) अपीलकर्ता का मामला है कि बेली राम एक वैधानिक किरायेदार बन गया था और दो साल तक परिसर में रहने के लिए सुरक्षा का हकदार था। इस स्थिति को बदला नहीं गया है। केवल यह तर्क दिया गया है कि उत्तरदाता जो बेली राम के उत्तराधिकारी हैं, किरायेदारों के अधिकारों का आनंद लेते रहे। बेली राम एक वैधानिक किरायेदार था और उसके अधिकार विरासत में नहीं हैं। पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम (1949 का 3) के तहत एक मामले में। यह माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा गौरी शंकर बनाम गौरी मामले में आयोजित किया गया था । श्रीमती शकुन्तला देवी और अन्य[1] (1) ने कहा कि 1949 के पूर्वी पंजाब अधिनियम 3 जैसे क़ानून का संरक्षण रखने वाला व्यक्ति क़ानून के तहत एक किरायेदार है, और उसके कब्जे वाली संपत्ति में कोई संपत्ति नहीं है और उसे कब्जे में रहने का केवल व्यक्तिगत अधिकार है क्योंकि कब्जे का ऐसा अधिकार क़ानून द्वारा संरक्षित है। ऐसे व्यक्ति की मृत्यु पर, वह अपने उत्तराधिकारियों को कोई संपत्ति नहीं भेजता है। उनके पास इमारत में कोई संपत्ति नहीं है और इसलिए उनके उत्तराधिकारियों को इमारत के कब्जे का अधिकार भी विरासत में नहीं मिला है। पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम (1949 का 3) के बारे में जो सच है, वह विस्थापित व्यक्ति (मुआवजा और पुनर्वास) अधिनियम, 1954 के प्रावधानों पर समान रूप से लागू होता है। वादी ने कब्जे के लिए मामला बनाया है और निचली अपीलीय अदालत ने ट्रायल कोर्ट द्वारा दी गई डिक्री को उलटने में कानून के अनुसार कार्य नहीं किया। मामले के इस दृष्टिकोण में, अपील को लागत के साथ अनुमति दी जानी चाहिए और ट्रायल कोर्ट की डिक्री को बहाल किया जाना चाहिए। प्रतिवादियों को परिसर खाली करने के लिए 1 नवंबर 1969 तक का समय दिया जाता है।

एन.के.एस.

सिविल विविध

न्यायमूर्ति प्रेम चंद पंडित और सी जी सूरी के समक्ष

रंजीत सिंह, - याचिकाकर्ता

बनाम

विस्थापित संपत्ति और अन्य के संरक्षक-महानिदेशक-
उत्तरदाता

[1] 1968 पी.एल.आर.87.

1966 की सिविल रिट संख्या 1708

8 अक्टूबर, 1969

विस्थापित संपत्ति अधिनियम का प्रशासन (1950 का XXXI) - धारा T और 27 - विस्थापित संपत्ति का प्रशासन (केंद्रीय) नियम (1950) - नियम 31 (5) - अभिरक्षक-जनरल द्वारा संशोधन की शक्ति - क्या समय कारक द्वारा नियंत्रित किया जाता है - ऐसी शक्ति - क्या वर्षों की संख्या के बाद प्रयोग किया जा सकता है - नियम 31 (5) में निर्धारित अवधि - - क्या बाध्यकारी - विस्थापित हित (पृथक्करण) अधिनियम (1951 का एलएक्सआईवी) - धारा 18 - सक्षम अधिकारी के निर्णय से जुड़ी अंतिमता - अभिरक्षक जनरल की सीमा - क्या अभिरक्षक के आदेश को संशोधित करने का अधिकार क्षेत्र है जिस पर वह निर्णय आधारित है।

अभिनिर्धारित किया गया कि विस्थापित संपत्ति प्रशासन अधिनियम, 1950 की धारा 27, अभिरक्षक जनरल को पुनरीक्षण की पूर्ण शक्ति प्रदान करती है और यह उसे किसी भी समय स्वत: संज्ञान लेने या उस ओर से किए गए आवेदन पर अपनी पुनरीक्षण शक्ति का उपयोग करने के लिए अधिकृत करती है। वाक्यांश 'किसी भी समय' इंगित करता है कि अभिरक्षक-जनरल की शक्ति किसी भी समय कारक द्वारा नियंत्रित नहीं होती है, बल्कि केवल अधिनियम के दायरे से नियंत्रित होती है जिसके भीतर संरक्षक कार्य करता है। इवैक्यूई संपत्ति प्रशासन नियमों के नियम 31 (5) में, 'सामान्य रूप से' शब्द का उपयोग इंगित करता है कि नियम में उल्लिखित निजी पक्षों द्वारा आवेदन दाखिल करने के लिए 60 दिनों की अवधि, सीमा की अवधि नहीं है, बल्कि केवल याचिकाकर्ता के मार्गदर्शन के साथ-साथ कस्टोडियन-जनरल के लिए एक नियम है। 60 दिनों के बाद पुनरीक्षण याचिकाओं पर विचार करना अभिरक्षक जनरल के विवेकाधिकार के भीतर है। नियम केवल उन्हें इंगित करता है कि संशोधन की शक्तियों का उपयोग करने के लिए उचित अवधि 60 दिन है। अभिरक्षक जनरल की संशोधन शक्तियों का मनमाने ढंग से प्रयोग करने का इरादा नहीं है। न्यायिक शक्ति होने के नाते इसका यथोचित प्रयोग किया जाना चाहिए। अभिरक्षक जनरल को हमेशा इस बात पर विचार करना होता है कि क्या किसी विशेष मामले में, उसे नियम 31 (5) में उल्लिखित 60 दिनों की अवधि से परे संशोधन पर विचार करना चाहिए। ऐसी विशेष परिस्थितियां हो सकती हैं जिनमें कई वर्षों की समाप्ति के बाद भी पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है। यदि किसी मामले के तथ्य और परिस्थितियां उस तरीके से अपने विवेक के प्रयोग को सही ठहराती हैं तो ऐसा करना पुनरीक्षण प्राधिकारी के विवेकाधिकार के भीतर है। (पैरा 6)

अभिनिर्धारित किया गया कि इवैक्यूई इंटरेस्ट (पृथक्करण) अधिनियम, 1951 के तहत कार्यवाही में, जो कुछ भी तय किया जा रहा है, वह संपत्ति के विभाजन का तरीका है और भूमि के टुकड़ों का सीमांकन है जो संपत्ति के विस्थापित और गैर-विस्थापित मालिकों को जाना है। अधिनियम की धारा 18 के तहत सक्षम अधिकारी के आदेश को अंतिम रूप देने में केवल उन प्रश्नों को संलग्न किया जा सकता है जो उस अधिनियम के तहत कार्यवाही में तय

किए गए हैं, न कि उन प्रश्नों के लिए जो पार्टियों द्वारा उत्तेजित नहीं किए जा सकते हैं या नहीं हैं या सक्षम अधिकारी द्वारा तय नहीं किए जा सकते हैं। सक्षम अधिकारी अभिरक्षक के निष्कर्षों के पीछे नहीं जा सकता है जो संपत्ति में एक निश्चित हिस्सा खाली संपत्ति के रूप में रखता है और दूसरा हिस्सा गैर-विस्थापित के रूप में रखता है। इसलिए अधिनियम के तहत सक्षम अधिकारी का निर्णय अभिरक्षक के आदेश को संशोधित करने के लिए अभिरक्षक-जनरल के अधिकार क्षेत्र पर रोक नहीं लगाता है, जिस पर वह निर्णय आधा(पैरा 11)

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत एक याचिका में अनुरोध किया गया है कि उत्तरदाता संख्या 1, दिनांक 31 मई 1966 के आदेश को रद्द करते हुए सर्टिओरारी, मंडामस, निषेध या किसी अन्य उचित रिट, आदेश या निर्देश की रिट जारी की जाए, जिसमें अतिरिक्त संरक्षक, पंजाब के 10 मई, 1952 के आदेश को रद्द कर दिया गया है, जिसमें मोहम्मद अशरफ द्वारा बिक्री की पुष्टि की गई थी। याचिकाकर्ता और गुरबख्श सिंह के पक्ष में मोहम्मद रफी।

याचिकाकर्ता की ओर से वकील सीएल लखनपाल और ईशर सिंह विमल

उत्तरदाता नंबर 1 और 2 के लिए चेतन दास दीवान, वकील

राम पियारा, उत्तरदाता नंबर 4 (व्यक्तिगत रूप से)

निर्णय

सी. जी. सूरी, न्यायमूर्ति- यह आदेश 1966 की सिविल रिट संख्या 1708 और 2193 का निपटारा करेगा, जो क्रमशः दो सगे भाइयों रंजीत सिंह और गुरबख्श सिंह पुत्रगण गज्जन सिंह द्वारा 31 मई, 1966 के एक आदेश को रद्द करने के लिए दायर की गई हैं। दोनों मामलों में शामिल तथ्य और कानून के सवाल लगभग समान हैं और विस्तार के मामूली अंतर का इन याचिकाओं के अंतिम परिणाम पर कोई असर नहीं पड़ता है। याचिकाकर्ताओं के मृत पिता श्री गज्जन सिंह कुछ शुरुआती चरणों में राजस्व अधिकारियों और पुनर्वास अधिकारियों के समक्ष अपने दो बेटों की ओर से मामलों का मुकदमा चला रहे थे। 31 मई, 1966 के आक्षेपित आदेश को पारित करते हुए, प्रतिवादी नंबर 1 ने विस्थापित संपत्ति प्रशासन अधिनियम, 1950 की संख्या XXXI (इसके बाद संक्षेप में 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 27 के तहत संशोधन की अपनी शक्तियों का उपयोग किया था और अतिरिक्त संरक्षक के 10 मई, 1952 के एक आदेश को रद्द कर दिया था और कार्यवाही को प्रतिवादी नंबर जे 2 को सौंप दिया था। ईस्ट पंजाब इवैक्यूई (संपत्ति प्रशासन) अधिनियम, 1947 की धारा 5-ए के तहत वर्ष 1948 में याचिकाकर्ताओं द्वारा अलग-अलग दायर दो आवेदनों पर कानून द्वारा नए सिरे से निर्णय लेने के लिए पंजाब के इवैक्यूई प्रॉपर्टी के संरक्षक।

(2) विवाद के बिंदुओं को ठीक से समझने के लिए इस स्तर पर मामले के तथ्यों को संक्षेप में बताना उचित

होगा। कमाल जिले के हेमोमाजरा और लाल पुरा गांवों में स्थित भूमि 1947 में भारत और पाकिस्तान के प्रभुत्व में देश के विभाजन से पहले मुस्लिम मालिकों की थी। प्रत्येक मामले में याचिकाकर्ता का दावा है कि उसने मुस्लिम मालिक (ओं) से अपनी संबंधित याचिका में वर्णित भूमि खरीदी है; लेकिन याचिकाकर्ताओं द्वारा स्थापित लेनदेन की वास्तविकता या ये लेनदेन किन तारीखों पर हुए थे, इस पर एक गंभीर विवाद है। रणजीत सिंह का दावा है कि उन्होंने 1939 बीघा जमीन में कुछ संयुक्त मुस्लिम मालिकों से 3/8 वां हिस्सा खरीदा था; शेष 5/8 वां हिस्सा अन्य मुस्लिम मालिकों के स्वामित्व में है। याचिकाकर्ता गुरबख्श सिंह का दावा है कि उसने लालपुरा गांव के शामलात में अधिकार के साथ 620 बीघा जमीन में एकमात्र स्वामित्व अधिकार खरीदा है और उनके मामले में विस्थापित हित (पृथक्करण) अधिनियम, 1951, 1951 की संख्या एलएक्सआईवी (इसके बाद संक्षेप में 'पृथक्करण अधिनियम' के रूप में संदर्भित) के अर्थ के भीतर किसी भी स्तर पर भूमि के 'समग्र संपत्ति' बनने के बारे में कोई जटिलता नहीं थी। गुरबख्श सिंह के मामले में, रणजीत सिंह के मामले की तरह अलगाव अधिनियम के तहत कोई कार्यवाही नहीं की गई थी और इस तरह गुरबख्श सिंह को इस दलील से वंचित कर दिया गया है कि इस अधिनियम की धारा 18 ने अतिरिक्त संरक्षक के 10 मई, 1952 के आदेश में समाप्त होने वाली कार्यवाही को अंतिम रूप दिया था, जिसे आक्षेपित आदेश द्वारा रद्द कर दिया गया है। कहा जाता है कि याचिकाकर्ताओं के दिवंगत पिता श्री गज्जन सिंह द्वारा 28 अगस्त 1945 को रणजीत सिंह के मामले में और गुरबख्श सिंह के मामले में 15 अप्रैल 1947 को मुस्लिम मालिकों के साथ बिक्री के समझौते किए गए थे। कहा जाता है कि विक्रेता को 1,000 रुपये की अग्रिम राशि का भुगतान किया गया था! (ख) उक्त तिथियों पर और याचिकाकर्ताओं ने बिक्री के करार के संबंध में बिना मुहर वाले और अपंजीकृत लेखन प्रस्तुत किए हैं। प्रत्येक मामले में पांच आंकड़ों में बिक्री विचार की शेष राशि का भुगतान जून 1947 में किया गया था, हालांकि इन भुगतानों का सबूत देने के लिए कोई लेखन नहीं है। कहा जाता है कि किसी भी मामले में बिक्री को अंतिम रूप दिया गया था और जून 1947 में पूरा किया गया था, हालांकि इन बिक्री के संबंध में उत्परिवर्तन के आदेश सितंबर के अंतिम सप्ताह में एक राजस्व अधिकारी द्वारा सत्यापित किए गए थे। 1947. बिक्री के समझौतों के रूप में इन लेखों की वास्तविकता जो निर्दोष रूप से कानूनी औपचारिकताओं जैसे टिकट, पंजीकरण, लाइसेंस प्राप्त लेखक द्वारा मसौदा तैयार करने आदि से मुक्त हैं, को उत्तरदाताओं द्वारा गंभीरता से विवादित किया गया है और साथ ही याचिकाकर्ताओं का यह भी कहना है कि बिक्री के उत्परिवर्तन के सत्यापन के समय मुस्लिम मालिक मौजूद थे या उन्हें बिक्री के शेष का भुगतान प्राप्त हुआ था। तारीखों का आरोप लगाया गया है या किसी अन्य समय।

(3) धारा 5-ए, जिसे पहली बार 1948 के पूर्वी पंजाब अध्यादेश संख्या 2 द्वारा 1947 के पूर्वी पंजाब विस्थापित (संपत्ति प्रशासन) अधिनियम, संख्या XIV में शामिल किया गया था, ने स्पष्ट रूप से मार्च

1948 से पहले, विस्थापित संपत्ति के हस्तांतरणकर्ताओं के लिए 15 अगस्त 1947 के बाद उनके पक्ष में किए गए हस्तांतरण की पुष्टि करना आवश्यक बना दिया था। पुष्टि के लिए आवेदन 31 मार्च 1948 को या उससे पहले या स्थानांतरण की तारीख के दो महीने के भीतर, जो भी बाद में हो, किया जाना था। याचिकाकर्ताओं ने विवादित बिक्री की पुष्टि के लिए सीमा की अंतिम तिथि, यानी 31 मार्च 1948 को उक्त धारा के तहत अलग-अलग आवेदन दायर किए। पंजाब में कस्टोडियन विभाग के अलग-अलग अधिकारी इस मामले से निपटे। विभिन्न चरणों में। सहायक संरक्षक, कमल, जिन्होंने पहली बार पूछताछ की, को जून 1947 में बिक्री मूल्य का भुगतान किए जाने के बारे में संदेह था। सहायक अभिरक्षक, न्यायिक ने सोचा कि बिक्री विचार के लिए थी, लेकिन इस बिंदु पर उनके निष्कर्ष को 13 नवंबर, 1948 के अतिरिक्त संरक्षक के आदेश में सही नहीं माना गया, जिन्होंने उपायुक्त, करनाल को उन परिस्थितियों की जांच करने के लिए कहा जिनके तहत राजस्व अधिकारी द्वारा उत्परिवर्तन आदेश पारित किए गए थे। उपायुक्त कमल ने कार्यवाही की समीक्षा का आदेश दिया और आगे निर्देश दिया कि संबंधित राजस्व अधिकारी के आचरण की जांच की जानी चाहिए। अतिरिक्त संरक्षक ने 9 अगस्त 1949 के अपने आदेश द्वारा याचिकाकर्ताओं से विक्रेताओं के बयानों या हलफनामों के रूप में सबूत पेश करने के लिए भी कहा था ताकि उन्हें विचार पारित करने या स्थानांतरण पूरा करने के बारे में संतुष्ट किया जा सके। याचिकाकर्ताओं ने किसी न किसी बहाने से स्थगन के बाद स्थगन की मांग की, लेकिन कोई संतोषजनक सबूत पेश करने में विफल रहे। इस बीच अतिरिक्त संरक्षक छुट्टी पर चले गए और पंजाब के अधिकृत उप संरक्षक श्री (बाद में न्यायमूर्ति) पीडी शर्मा ने अतिरिक्त संरक्षक की अनुपस्थिति में कार्यभार संभाल लिया। याचिकाकर्ताओं को पेश करने के लिए बुलाए गए सबूतों की प्रतीक्षा किए बिना, उन्होंने 1 मई, 1952 को एक विस्तृत रिपोर्ट बनाई, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ कहा गया कि विक्रेताओं को बिक्री के लिए पूरा विचार मिला था और उन्होंने 14 अगस्त, 1947 से पहले भूमि का कब्जा दे दिया था और बिक्री पूर्वी पंजाब विस्थापित (संपत्ति का प्रशासन) अधिनियम की धारा 5-ए (एल) में निर्दिष्ट तारीख से पहले पूरी हो गई थी। 1947 की संख्या XIV में, याचिकाकर्ताओं को बिक्री की पुष्टि करने की आवश्यकता नहीं थी और उक्त धारा के तहत उनके आवेदन गलत थे और अस्वीकार कर दिए गए थे। उन्होंने याचिकाकर्ताओं के वकील को 12 मई 1952 को अतिरिक्त संरक्षक के समक्ष पेश होने का निर्देश दिया, लेकिन बाद के अधिकारी भी जल्दी में थे और 10 मई 1952 को आदेश पारित किए, जिसमें इवैक्यूई संपत्ति के अधिकृत उप संरक्षक से सहमति व्यक्त की गई और तदनुसार कार्रवाई का निर्देश दिया गया। यह अतिरिक्त संरक्षक का 10 मई 1952 का आदेश है, जिसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत दायर इन रिट याचिकाओं में चुनौती दिए गए आदेश द्वारा रद्द कर दिया गया है।

(4) याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील श्री लखनपाल ने आधा दर्जन से अधिक आधारगिनाए हैं जिन पर वह प्रतिवादी नंबर 1 के आदेश पर हमला करते हैं, लेकिन इन आधारों पर लागू आदेश की वैधता या औचित्य

के संबंध में दो व्यापक शीर्षों के तहत चर्चा की जा सकती है। पहले शीर्ष के तहत, हम उन आपत्तियों की जांच कर सकते हैं कि प्रतिवादी नंबर 1 को इतने वर्षों के बाद हस्तक्षेप करने के लिए कानून द्वारा अधिकार नहीं दिया गया था और यह कि विस्थापित संपत्ति प्रशासन अधिनियम, 1950, विस्थापित संपत्ति (पृथक्करण) अधिनियम, 1951, या भूमि के उपयोग अधिनियम जैसे कुछ अधिनियमों के प्रावधानों के तहत कार्यवाही प्रतिवादी नंबर 1 के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप करने से रोकती है। दूसरे शीर्ष के तहत हम आपत्तियों या तर्कों की जांच कर सकते हैं कि भले ही कानून ने प्रतिवादी नंबर 1 को हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया हो, लेकिन एक दशक से अधिक समय के बाद ऐसा करना उनकी ओर से समीचीन या उचित नहीं था। अधीनस्थ अधिकारियों या न्यायालयों के आदेशों के साथ संशोधन में हस्तक्षेप के लिए प्रतिवादी संख्या 1 के लिए उपलब्ध सीमा की अवधि कानून और तथ्य का मिश्रित प्रश्न बन जाती है और इन दो व्यापक प्रमुखों के विभाजन की रेखा पर प्रतीत हो सकती है। यह आपत्ति कि प्रतिवादी नंबर 1 को इस स्तर पर संशोधन में हस्तक्षेप करने से रोक दिया गया था, अगर बरकरार रखा जाता है, तो हमारे लिए अन्य आधारों की जांच करना अनावश्यक हो सकता है और इसलिए, इस आधार पर पहले विचार किया जा रहा है।

(5) परिसीमा के प्रश्न के अलावा, अभिरक्षक जनरली को अधिनियम की धारा 27 के तहत शक्तियां दी जाती हैं, या तो उसके स्वयं के प्रस्ताव पर या इस संबंध में उसे दिए गए आवेदन पर कि वह किसी भी कार्यवाही का रिकॉर्ड मांग सकता है जिसमें किसी अभिरक्षक ने ऐसे किसी आदेश की वैधता या औचित्य के बारे में खुद को संतुष्ट करने के उद्देश्य से आदेश पारित किया है और वह उसके संबंध में ऐसे आदेश पारित कर सकता है जैसा वह सोचता है। तै कर। यह धारा प्रतिवादी संख्या 1 को संशोधन की व्यापक और सामान्य शक्तियां प्रदान करती है और धारा में 'किसी भी समय' शब्दों का शाब्दिक अर्थ है, उस समय के संबंध में कोई सीमा नहीं है जिसके भीतर शक्तियों का उपयोग किया जा सकता है। ये शब्द कई अन्य अधिनियमों की संगत धाराओं में मौजूद पाए जाएंगे जो एक उच्च प्राधिकारी को संशोधन की शक्तियां देते हैं और कुछ मामलों में जहां धारा उस अवधि के बारे में चुप है जिसके भीतर शक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है, इन शब्दों को लाइनों के बीच पढ़ा गया है, भले ही वे काले और सफेद रंग में दिखाई न दें। एक संक्षिप्त संदर्भ कुछ महत्वपूर्ण निर्णयों का किया जा रहा है जो इन शब्दों की व्याख्या करते हैं, चाहे वे मौजूदा हों या कानून की कल्पना द्वारा मौजूद माने जाते हों, कुछ अन्य अधिनियमों की संबंधित धाराओं में उच्च अधिकारी/प्राधिकारी को पुनरीक्षण शक्तियां प्रदान करते हैं। इन फैसलों से पता चलता है कि शाब्दिक अर्थ के बावजूद 'किसी भी समय' शब्द का कुछ परिस्थितियों में एक सीमित अर्थ हो सकता है। हमारे समक्ष उद्धृत पहला महत्वपूर्ण निर्णय जिसमें इन शब्दों को एक सीमित अर्थ दिया गया था, भीखन और अन्य

बनाम अन्य मामले में इस न्यायालय का एक पुल बेंच निर्णय था। पंजाब राज्य , (1)। ईस्ट पंजाब होल्डिंग्स (समेकन और विखंडन रोकथाम) अधिनियम, 1948 की संख्या 50 की धारा 36 में 'किसी भी समय' शब्द की व्याख्या की गई। टेक चंद और दुआ, जेजे का बहुमत का विचार यह था कि अधिनियम की धारा 36 में इस्तेमाल की गई 'किसी भी समय' अभिव्यक्ति के लिए उन पर कुछ सीमा निर्धारित की जानी चाहिए। इन शब्दों पर विचार किया गया कि अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के अनुसार होल्डिंग्स के समेकन का उद्देश्य पूरा होने के बाद निपटान अधिकारी को किसी योजना को रद्द करने या बदलने की शक्तियां न दी जाएं। इस निर्णय की शुद्धता के संबंध में कुछ संदेह लक्ष्मण पुरुषोत्तम पिम्प्सकर बनाम भारत मामले में उच्चतम न्यायालय के एक फैसले से उत्पन्न हुए थे। बॉम्बे राज्य और अन्य (2), जो 1874 के बॉम्बे वंशानुगत कार्यालय अधिनियम, संख्या III के तहत एक मामला था। राज्य सरकार को बॉम्बे अधिनियम की धारा 79 द्वारा संशोधन की शक्तियां दी गई थीं, जिसमें संशोधन के लिए आवेदन को प्राथमिकता देने के लिए कोई सीमा अवधि निर्दिष्ट नहीं की गई थी। यह देखा गया कि सामान्यत सरकार को तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि उचित समय के भीतर कदम न उठाया जाए, लेकिन किसी विशेष मामले में उचित समय के रूप में क्या माना जाना चाहिए, यह पूरी तरह से सरकार द्वारा विचार करने का विषय होगा। जब कोई प्राधिकरण धारा 79 के तहत अपनी पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग करता है, तो यह आवश्यक रूप से न्यायिक या अर्ध-न्यायिक क्षमता में कार्य करता है। इस तरह के आदेश को सिर्फ प्रशासनिक आदेश के रूप में रद्द या संशोधित या संशोधित नहीं किया जा सकता है। सरकार के आदेश को बॉम्बे एक्ट की धारा 79 के तहत अंतिम रूप देने की बात कही गई थी। उस मामले में, 20 साल से अधिक समय पहले पारित एक आदेश को परेशान करने के लिए संशोधन की शक्तियों का उपयोग किया गया था और फिर भी पुनरीक्षण आदेश को बरकरार रखा गया था। चाहा खान और अन्य में वी। पंजाब राज्य और अन्य), इस न्यायालय की एकल पीठ को 1948 के पूर्वी पंजाब होल्डिंग्स (समेकन और विखंडन की रोकथाम) अधिनियम, संख्या 50 की धारा 36 में 'किसी भी समय' शब्दों की फिर से व्याख्या करने के लिए बुलाया गया था, और उनके समक्ष यह तर्क दिया गया था कि लक्ष्मण पुरुषोत्तम पिमपुतकर 123 में सुप्रीम कोर्ट का फैसला, (2), मामले ने भीखन के मामले में पूर्ण पीठ के फैसले की वैधता को प्रभावित किया था, (1)। इसलिए, न्यायाधीश ने प्रश्न को एक बड़ी पूर्ण पीठ के निर्णय के संदर्भ में संदर्भित किया था। पांच न्यायाधीशों की एक पूर्ण पीठ का गठन किया गया था और इसके निर्णय को 1966 पीएलआर 239=एआईआर 1966 पुंज के रूप में रिपोर्ट किया गया है। बीमार (एफ.बी.)। मुख्य न्यायाधीश मेहर सिंह (न्यायमूर्ति जैसा कि वह तब थे) ने मुख्य निर्णय दर्ज किया और अधिनियम की योजना और जिस संदर्भ में अधिनियम में धारा 36 निर्धारित की गई थी, उसे देखते हुए, भीखन के मामले में पूर्ण पीठ का निर्णय, (1) अच्छा कानून बना रहा। हालांकि, यह माना गया था कि उस अधिनियम

[1] आई.एल.आर. 1963 (1) पंजाब 660-ए.आई.आर. 1963 पंजाब 225 (एफ.बी.) — 1963 पी.एल.आर.

की धारा 36 में ‘किसी भी समय’ शब्दों की यह प्रतिबंधित व्याख्या सार्वभौमिक अनुप्रयोग के लिए नहीं थी और यदि मामले की परिस्थितियों की आवश्यकता हो तो इन शब्दों को व्यापक अर्थ दिया जा सकता है। इसी अधिनियम की धारा 42 में होने वाले समान शब्दों को नर सिंह मंसूर सिंह और अन्य मामले में इस न्यायालय की एक अन्य पूर्ण पीठ के फैसले में अधिक व्यापक अर्थ माना गया है। राज्य और अन्य [4] (4) बहुमत का मत यह था कि समेकन अधिनियम की धारा 42 में प्रयुक्त 'किसी भी समय' शब्द राज्य सरकार को प्रदत्त शक्ति को अनंत, अनिश्चित या अनिश्चित अवधि में प्रदान करता है और ये शक्तियां समय के बिंदु पर बिना किसी सीमा के प्रयोग योग्य हैं। भीखन के मामले (1) और चाहत खान के मामले (3) में फैसला दर्ज करने वाले माननीय न्यायाधीशों ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि वे केवल धारा 36 पर विचार कर रहे थे, न कि चकबंदी अधिनियम की धारा 42 पर। चकबंदी अधिकारी को प्रदत्त शक्तियों की प्रकृति, संपूर्ण अधिनियम की योजना और संदर्भ। जिस खंड को रखा गया था, वे सभी कारक थे जिनके कारण उस खंड में ‘किसी भी समय’ शब्दों को एक सीमित अर्थ दिया गया था। इन विचारों को उसी अधिनियम की धारा 42 में होने वाले समान शब्दों की व्याख्या में आकर्षित नहीं किया गया था। चाहत खान के मामले (3) में, मुख्य न्यायाधीश मेहर सिंह (न्यायमूर्ति जैसा कि वह तब थे) ने कहा था कि धारा 42 विचाराधीन नहीं थी और यह एक अलग सेटिंग में दिखाई देती है और इसकी भाषा धारा 36 की तुलना में काफी अलग और बहुत व्यापक थी। अंतिम विश्लेषण में यह माना गया कि समेकन अधिनियम की धारा 36 में ‘किसी भी समय’ शब्दों की व्याख्या करने के लिए उस निर्णय में कही गई कोई भी बात उस अधिनियम की धारा 42 में होने वाली अभिव्यक्ति पर स्वचालित रूप से लागू नहीं होगी।

(6) कुछ अन्य अधिनियमों के संबंधित पुनरीक्षण प्रावधानों के तहत केस लॉ का यह संक्षिप्त शोध प्रबंध यहां केवल अकादमिक हित का है क्योंकि प्रासंगिक खंड और अधिनियम के तहत बनाए गए नियम, सुप्रीम कोर्ट के फैसले में प्रत्यक्ष व्याख्या के लिए आए हैं। प्रतिवादी नंबर 1 ने केवल इस फैसले पर भरोसा किया था और अगर वह इस विषय पर अन्य मामले के कानून का उल्लेख करने की परवाह नहीं करता था तो यह बहुत गलत नहीं था। अधिनियम की धारा 27 को अभिरक्षक जनरल को पुनरीक्षण की पूर्ण शक्ति प्रदान करने के लिए पाया गया था और इसने उन्हें किसी भी समय स्वत: संज्ञान लेते हुए या इस संबंध में किए गए आवेदन पर अपनी पुनरीक्षण शक्तियों का उपयोग करने के लिए अधिकृत किया था। वाक्यांश 'किसी भी समय' ने संकेत दिया कि अभिरक्षक-जनरल की शक्ति किसी भी समय कारक द्वारा नियंत्रित नहीं थी, बल्कि केवल अधिनियम के दायरे से नियंत्रित थी जिसके भीतर संरक्षक-जनरल कार्य करता था। अधिनियम के तहत बनाए गए नियम जे के नियम 31 (5) पर भी विचार किया गया और

[4] एआईआर 1967 पंजाब 111

'सामान्यत' शब्द के उपयोग से यह संकेत मिलता है कि नियम में उल्लिखित निजी पक्षों द्वारा आवेदन दाखिल करने के लिए 60 दिनों की अवधि, सीमा की अवधि नहीं थी, बल्कि केवल याचिकाकर्ता के मार्गदर्शन के साथ-साथ कस्टोडियन-जनरल के लिए एक नियम था। 60 दिनों के बाद पुनरीक्षण याचिकाओं पर विचार करना अभिरक्षक जनरल के विवेकाधिकार के भीतर था। नियम ने उन्हें केवल यह संकेत दिया कि संशोधन की शक्तियों का उपयोग करने के लिए उचित अवधि 60 दिन थी। अभिरक्षक जनरल की संशोधन शक्तियों का मनमाने ढंग से प्रयोग करने का इरादा नहीं था। एक न्यायिक शक्ति होने के नाते इसे संरक्षक-जनरल के विवेकाधिकार में उचित तरीके से प्रयोग किया जाना था और यह अभिरक्षक-जनरल पर विचार करना था कि क्या किसी विशेष मामले में उसे नियम 31 (5) में उल्लिखित 60 दिनों की अवधि से परे संशोधन पर विचार करना चाहिए। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 का सिद्धांत, जो केवल अपीलों पर लागू होता है, को अधिनियम की धारा 27 के तहत संशोधन याचिकाओं तक विस्तारित नहीं किया जा सकता है क्योंकि ऐसी संशोधन याचिकाओं के लिए सीमा की कोई अवधि निर्धारित नहीं की गई थी। उपर्युक्त से ऐसा प्रतीत हो सकता है कि ऐसी विशेष परिस्थितियां हो सकती हैं जिनमें कई वर्षों की समाप्ति के बाद भी संशोधन शक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है। यह प्रश्न कि क्या अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभिरक्षक जनरल की पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग कई वर्षों के अंतराल के बाद किया जा सकता है, जगतजीत डिस्टिलिंग एंड एलाइड इंडस्ट्रीज लिमिटेड के मामले में सामने आया। उप अभिरक्षक-जनरल, भारत और अन्य 6, (6) और यह देखा गया कि ऐसा करना पुनरीक्षण प्राधिकारी के विवेकाधिकार के भीतर था यदि मामले के तथ्य और परिस्थितियां उसे उस तरीके से अपने विवेक के प्रयोग को सही ठहराती थीं। उत्तरदाताओं द्वारा स्पष्ट रूप से कहा गया है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा धोखाधड़ी की गई है और यह धोखाधड़ी उन्हें हाल ही में पता चली है। धोखाधड़ी एक शातिर चीज है जो अधिकांश लेनदेन और कार्यवाही को अमान्य कर सकती है और इसका पहला ज्ञान सीमा अवधि को एक नई शुरुआत दे सकता है।

(7) आक्षेपित आदेश में प्रतिवादी नंबर 1 ने ऐसे तथ्य और परिस्थितियां दी हैं जिनके कारण उन्हें याचिकाकर्ताओं द्वारा स्थापित बिक्री की वास्तविकता पर संदेह हुआ और इसलिए, अतिरिक्त संरक्षक के 10 मई 1952 के आदेश को रद्द करना पड़ा। प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा दिए गए कई कारणों में, मैं कुछ और जोड़ सकता हूं, लेकिन मैं प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा 1947 के पूर्वी पंजाब अधिनियम XIV की धारा 5-ए के तहत प्रतिवादी नंबर 2 द्वारा की गई नई जांच या 1950 के अधिनियम के संबंधित प्रावधान के तहत अधिक सटीक होने का आदेश नहीं देना चाहूंगा। हालांकि, मैं इस अनुमान पर टिप्पणी करने से खुद को रोक नहीं सकता कि याचिकाकर्ताओं द्वारा स्थापित लेखन सितंबर, 1947 में अस्तित्व में आया था।

[6] 1963 पी.एल.आर. 328 (डी.बी.)

जब इन बिक्री की सूचना पहली बार पटवारी को दी गई और उसके द्वारा म्यूटेशन रजिस्टर में दर्ज की गई और फिर सितंबर, 1947 के अंतिम सप्ताह के दौरान एक राजस्व अधिकारी द्वारा सत्यापित किया गया, तो किसी भी पक्ष को यह पता नहीं था कि वे पहले ही महत्वपूर्ण तारीख को पार कर चुके हैं क्योंकि यह तारीख धारा 5-ए (एल) में बहुत बाद में निर्दिष्ट की गई थी। जिसे पहली बार 1947 के इवैक्यूज़ अधिनियम, 1947 के अध्यादेश संख्या 2 द्वारा 1947 के 14वें में सम्मिलित किया गया था। यही कारण है कि उस समय लेनदेन को म्यूटेशन आदेशों के कॉलम नंबर 13 में 'मौखिक बिक्री, दिनांक 26 सितंबर, 1947' के रूप में वर्णित किया गया था। इस तारीख को पटवारी को पहली बार बिक्री की सूचना दी गई थी और उसने अपनी दैनिक डायरी या रोजनामचा में और म्यूटेशन रजिस्टर में भी प्रविष्टियां की थीं। अगर गुरबख्श सिंह एक पटवारी के नोट को प्राप्त करने में सक्षम रहे हैं, जिसमें दिखाया गया है कि उनके उत्परिवर्तन आदेश का वर्गीकरण जून, 1947 में कहीं किया गया था, तो यह केवल यह सुझाव दे सकता है कि याचिकाकर्ताओं ने अपने पैरों के नीचे घास नहीं उगने दी है। म्यूटेशन आदेशों के कॉलम 13 में दिए गए विवरण के विपरीत, इन लेन-देन ो◌ं को दिखाने की आवश्यकता जून, 1947 से पहले पूरी हो चुकी बिक्री के रूप में या उन्हें लेखन में कम कर दी गई थी, पूर्वी पंजाब अध्यादेश द्वारा 1947 के पूर्वी पंजाब अधिनियम, संख्या XIV में धारा 5-ए को पहली बार शामिल किए जाने के बाद महसूस किया गया होगा। 1947 का नंबर 2। यदि दस्तावेज गढ़े गए थे, तो यह धारा 5-ए को पहली बार कानून की किताब में रखे जाने के बाद किया गया होगा। किसी भी तरह से यह इंगित करने के लिए मजबूत परिस्थितियां हैं कि प्रतिवादी नंबर 1 ने इतने साल बीत जाने के बावजूद नए सिरे से जांच का निर्देश देने में अपने विवेक का यथोचित उपयोग किया था।

(8) अब मैं इस आधार पर विचार कर सकता हूं कि इस अधिनियम या पृथक्करण अधिनियम या भूमि उपयोग अधिनियम के प्रावधानों के तहत कार्यवाही, प्रतिवादियों को मामले में हस्तक्षेप की उनकी शक्तियों से वंचित करती है या उक्त अधिनियमों के तहत कार्यवाही को अंतिम रूप दिया गया है कि प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा लागू आदेश कानूनी रूप से पारित नहीं किया जा सकता है। यह तर्क दिया गया है कि अधिनियम की धारा 7 और 7-ए एक डेड-लाइन निर्धारित करती है जिसके लिए कोई भी संपत्ति मूर्त कदम हो सकती है जैसे नोटिस जारी करना, भौतिक कब्जा लेना, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचनाओं का प्रकाशन आदि, किसी भी संपत्ति में निहित होने या घोषित किए जाने से पहले आवश्यक थे। पुनर्वास विभाग के अधिकारियों द्वारा खाली की गई संपत्ति। इस संबंध में दर्शन लाई बनाम आरएल अग्रवाल और अन्य 7, (में एकल पीठ के फैसले का हवाला दिया गया है। इस फैसले के खिलाफ एक लेटर्स पेटेंट अपील दायर की गई थी और अपील पर सुनवाई करने वाली

डिवीजन बेंच के फैसले को आरएल अग्रवाल और अन्य बनाम दर्शन लाई और अन्य [8], (8) के रूप में रिपोर्ट किया गया है। एकल न्यायाधीश की कुछ टिप्पणियों से असहमति व्यक्त की गई थी, लेकिन आदेश को उन आधारों से अलग आधारों पर बरकरार रखा गया था जो विद्वान एकल न्यायाधीश के साथ प्रचलित थे। इसके अलावा, वरयाम सिंह बनाम भारत मामले में एक अप्रकाशित फैसले में इसका उल्लेख किया गया है। भारत संघ[3] 9, (9), कि दर्शन लाई बनाम आरएल अग्रवाल और अन्य, (7) में एकल पीठ के फैसले को विशेष रूप से कस्टोडियन-जनरल इवैक्यूई प्रॉपर्टी और अन्य बनाम शांति सरूपा 10, (10), याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा उद्धृत फैसलों में विशेष रूप से फैसला सुनाया गया था, जिसमें इनायत उल्लाह बनाम कस्टोडियन, इवैक्यूई प्रॉपर्टी 11, (11), और सहायक संरक्षक और अन्य बनाम काजी अब्दुल गफूर और अन्य 12 शामिल हैं।(12) अधिनियम की धारा 8 में उप-धारा (2-क) को शामिल किए जाने के बाद अच्छा कानून नहीं रह गया है और अधिनियम की धारा 11 में संशोधन किया गया है। मैं 1960 का हूं। यह उप-धारा संरक्षक में विस्थापित संपत्ति के स्वचालित निहित होने में सभी दोषों को दूर करती है और इसके विपरीत सभी निर्णयों को रद्द कर देती है। इस उप-धारा को हमेशा अधिनियम में सम्मिलित माना जाना था। इस उप-धारा के प्रभाव पर इस न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के अनेक विनिर्णयों में विचार किया गया है। अजीजुन्निसा और अन्य में वी। डिप्टी कस्टोडियन, इवैक्यूप्रॉपर्टीज, जिला देवरिया और अन्य 13, (13), उनके लॉर्डशिप निम्नानुसार देखने में प्रसन्न थे: -

“धारा 8 (2-ए) का प्रभाव यह है कि 1949 के विस्थापित संपत्ति प्रशासन अध्यादेश XXVII की धारा 8 (2) के तहत निहित है और जिसे अधिनियम की धारा 8 के तहत निहित माना जाता है, जिसने किसी भी अवैधता के बावजूद उस अध्यादेश को निरस्त कर दिया।

[8] 1960 पी.एल.आर. 509

[9] एलपीए 39 पर 29 नवंबर, 1962 को फैसला लिया गया

[10] I.LR 1962 पंजाब 149 (डी.बी.)

[11] ए.आई.आर. 1958 एस.सी. 160

[13] ए.जे.आर. 1961 एस.सी. 365

[12] 1965 ए.एल.जे. 1166

मूल निहित या न्यायालय के किसी भी डिक्री या आदेश में वैध रूप से संरक्षक में निहित विस्थापित संपत्ति माना जाएगा और संपत्ति के बारे में संरक्षक द्वारा किया गया कोई भी आदेश वैध माना जाएगा। इस प्रकार अधिनियम को पूर्वव्यापी प्रभाव दिया जाता है ताकि (1) जो निहित होने का इरादा है, उसे मान्य किया जा सके; (2) 1949 के अध्यादेश XVII की धारा 8 (2) या अध्यादेश को निरस्त करने वाले अधिनियम की धारा 8 (2) के तहत निहित या काल्पनिक निहित होने में सभी दोषों या अमान्यता को दूर करना; (3) निहित करने के संबंध में किसी भी न्यायालय के विपरीत आदेशों और निर्णयों को अप्रभावी बनाता है; (4) संपत्ति को उसके प्रभाव से खाली संपत्ति बनाता है; और (5) संपत्ति के संबंध में संरक्षक द्वारा पारित सभी आदेशों को मान्य करता है।

> "अभिप्राय" शब्द के अर्थ के कई रंग हैं। इसका अर्थ है काल्पनिक, जो उपकरण के चेहरे पर दिखाई देता है; स्पष्ट और कानूनी आयात नहीं और इसलिए, कोई भी कार्य जो किसी शक्ति के प्रयोग में किया जाना चाहता है, उसे उस शक्ति के भीतर किया जाना माना जाना चाहिए, भले ही शक्ति प्रयोग योग्य न हो। इसलिए, अभिप्राय इस बात का संकेत है कि इसके चेहरे पर क्या दिखाई देता है या स्पष्ट है, भले ही कानून में ऐसा न हो। इसका मतलब यह है कि जिस समय अधिनियम कथित रूप से संपत्ति को संरक्षक में निहित करता है, भले ही शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता था, धारा 8 (2-ए) अधिनियम की धारा 8 (2) को पूर्वव्यापी प्रभाव देकर निहित बनाता है जैसे कि यह अधिनियम की धारा 8 (2) के तहत निहित था और, इसलिए, अयोग्यता के आधार पर हमला जारी नहीं रखा जा सकता है।"

(9) उच्चतम न्यायालय के इस निर्णय का पालन जगतजीत डिस्टिलिंग एंड एलाइड इंडस्ट्रीज लिमिटेड के मामले में किया गया था। भारत और अन्य के उप अभिरक्षक जनरल (6) और पृष्ठ 334 से 337 पर पैराग्राफ 6 और 7 में माननीय न्यायाधीशों की टिप्पणी हमारे मामले के तथ्यों के लिए बहुत प्रासंगिक प्रतीत हो सकती है। अधिनियम की धारा 7 और 7-ए को इस मामले के तथ्यों के समान तथ्यों पर अभिरक्षक-जनरल की पुनरीक्षण शक्ति के प्रयोग के रास्ते में नहीं आने के लिए कहा गया था। इसी तरह का दृष्टिकोण मैसर्स हाजी इस्माइल नूर मोहम्मद एंड कंपनी और अन्य बनाम सक्षम अधिकारी, लखनऊ और अन्य 14 ([14]) में लिया गया था । यह तर्क कि धारा 7 और 7-ए निरर्थक हो जाएगी यदि सभी विस्थापित

(14) A.I.R. 1967 S.C. 1244

संपत्ति को संरक्षक में निहित माना जाता है

सामान्य अधिसूचना के तहत उन्हें कोई और ठोस या कठोर कदम उठाने की आवश्यकता के बिना, वरयाम सिंह बनाम वरयाम सिंह मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ के एक असूचित निर्णय में पूरी तरह से पूरा किया गया है। भारत संघ आदि (9)। यह भी तर्क दिया गया था कि 7 मई, 1954 को या उसके बाद किसी भी संपत्ति को विस्थापित संपत्ति के रूप में घोषित करने के संबंध में निषेध अर्थहीन हो जाएगा। हरबंस सिंह, जे. जिन्होंने मुख्य निर्णय लिखा, ने निम्नानुसार टिप्पणी की: –

"हालांकि, अपीलकर्ता के वकील का तर्क यह है कि केवल एक सामान्य अधिसूचना के माध्यम से, संरक्षक द्वारा कभी भी खाली संपत्ति होने का दावा की गई संपत्ति का कब्जा नहीं लिया जा सकता है, ऐसी संपत्ति को संरक्षक में निहित नहीं किया जा सकता है और 1954 के बाद किसी भी संपत्ति को विस्थापित संपत्ति के रूप में घोषित नहीं किया जा सकता है। पूर्वी पंजाब विस्थापित (संपत्ति प्रशासन) अध्यादेश, 1947 की धारा 5 में स्वचालित निहित प्रावधान निहित थे, जिसे पूर्वी पंजाब विस्थापित (संपत्ति का प्रशासन) अधिनियम, 1947 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। 1949 में केंद्रीय अध्यादेश (1949 का नंबर 27) प्रख्यापित किया गया था, जिसे बदले में, विस्थापित संपत्ति प्रशासन अधिनियम, 1950 (1950 की संख्या 31) द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था।

जबकि 1949-50 से पहले मुख्य रूप से पंजाब और दिल्ली राज्यों में विस्थापितों का कानून मौजूद था, जहां से अधिकांश लोग पाकिस्तान चले गए थे, केंद्रीय अध्यादेश और अधिनियम पूरे संघ पर लागू हो गए थे। उपरोक्त अधिनियम की धारा 7 के अनुसार, यदि संरक्षक को लगता है कि कोई संपत्ति खाली की गई संपत्ति है, तो उसे इच्छुक पक्ष को नोटिस देना था और फिर मामले की परिस्थितियों के अनुसार मामले में ऐसी जांच करनी थी और संपत्ति के संबंध में उसके समक्ष रखे गए संबंधित दावों पर गौर करने के बाद, वह ऐसी संपत्ति को विस्थापित संपत्ति के रूप में अधिसूचित करते हुए एक घोषणा जारी कर सकता है। इस तरह की अधिसूचना के बाद ही संपत्ति धारा 8 की उप-धारा (1) के तहत संरक्षक में निहित होगी। हालांकि, धारा 8 की उप-धारा (2) के तहत यह विशेष रूप से प्रावधान किया गया था कि कोई भी संपत्ति, जो अध्यादेश के प्रवर्तन से पहले, अभिरक्षक में निहित थी, अधिनियम के तहत संरक्षक में निहित रहेगी।

(10) हालांकि, याचिकाकर्ता की ओर से इस अदालत की दो एकल पीठ के फैसलों- कस्टोडियन इवैक्यूई प्रॉपर्टी, पंजाब बनाम गुजर सिंह और अन्य[15], (15) वेस्टन, सीजे और दर्शन लाई बनाम आरएल

(14) A.I.R. 1967 S.C. 1244
[15] I.L.R. 1953 Punjab. 212=1953 P.L.R.94

अग्रवाल (7) पर भरोसा किया गया था, जिसमें यह कहा गया था कि संपत्ति को संरक्षक संपत्ति के रूप में सौंपने के लिए एक सामान्य अधिसूचना पर्याप्त नहीं थी। इस मामले पर इस न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा कस्टोडियन-जनरल इवैक्यूई प्रॉपर्टी और अन्य बनाम शांति सरूप (10) में चर्चा की गई थी, और उपरोक्त मामले में ग्रोवर, जे के फैसले को विशेष रूप से खारिज कर दिया गया था, और अजीजुन्सा बनाम सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणियों का पालन किया गया था। डिप्टी कस्टोडियन इवैक्यूई प्रॉपर्टीज, जिला देवरिया, (13) को यह माना गया कि पूर्वी पंजाब अधिनियम या अध्यादेश के तहत सामान्य अधिसूचना के आधार पर कस्टोडियन में निहित संपत्तियां, जिसे केंद्रीय अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था, कस्टोडियन में निहित हैं और केंद्रीय अधिनियम की धारा 7 में विस्तृत प्रक्रिया का पालन करना आवश्यक नहीं है। यह निर्णय, जिसके लिए हम में से एक, फालशॉ, सीजे (फालशॉ, जे, जैसा कि वह तब थे) एक पक्ष था, हमारे लिए बाध्यकारी है और अन्यथा ठोस प्रतीत होता है। हालांकि, विद्वान वकील ने आग्रह किया कि यदि सभी विस्थापित संपत्ति सामान्य अधिसूचना द्वारा संरक्षक में निहित थी, तो 7 मई, 1954 को या उसके बाद किसी भी संपत्ति को खाली संपत्ति घोषित करने पर प्रतिबंध लगाने वाले संशोधन अधिनियम (1954 की संख्या 42) को पारित करने की शायद ही कोई आवश्यकता थी। हालांकि, वकील ने इस बिंदु को नजरअंदाज कर दिया कि पंजाब और दिल्ली के अलावा अन्य राज्यों में संबंधित व्यक्ति को नोटिस दिए बिना संरक्षक में कोई संपत्ति निहित नहीं है। इसके अलावा, "विस्थापित" की परिभाषा इस तरह है कि यदि कोई व्यक्ति 15 अगस्त, 1947 के बाद किसी भी समय पाकिस्तान के लिए रवाना हो जाता है, तो उसे एक विस्थापित घोषित किया जा सकता है और उसकी संपत्ति को संरक्षक द्वारा कब्जे में ले लिया जा सकता है। संशोधन अधिनियम का विचार, जैसा कि उद्देश्यों और कारणों के बयान से भी स्पष्ट है, निर्दिष्ट तिथि से विस्थापित अधिनियम के प्रावधानों को निरस्त करना था। आपातकाल समाप्त होने के बाद, यदि कोई व्यक्ति इसके बाद पाकिस्तान के लिए रवाना होता है, तो उसकी संपत्ति को आमतौर पर अनुपस्थित मालिक की संपत्ति के रूप में माना जाएगा और संरक्षक को तस्वीर में आने की कोई आवश्यकता नहीं थी। इसलिए, संशोधन अधिनियम के प्रावधान निश्चित रूप से निरर्थक नहीं हैं और ये प्रावधान, किसी भी तरह से, संपत्ति के निहित होने को प्रभावित नहीं करते हैं जो राज्य विस्थापित अधिनियम या अध्यादेश के तहत सामान्य अधिसूचना द्वारा हुआ था। पंजाब से बड़ी संख्या में मुसलमान पलायन कर गए हैं, कई स्थानीय निवासियों ने चोरी-छिपे संबंधित संपत्तियों पर कब्जा कर लिया था।

"ऐसे लोगों के लिए एक सामान्य अधिसूचना द्वारा स्वचालित निहित, नतीजतन, बेईमान लोगों को आबादी के एक बड़े हिस्से के प्रवास का अनुचित लाभ उठाने से रोकने के लिए आवश्यक हो जाता है।"

(11) इसके बाद यह तर्क दिया जाता है कि पृथक्करण अधिनियम की धारा 18 ने सक्षम अधिकारी के समक्ष कार्यवाही को अंतिम रूप दिया था और सहायक संरक्षक ने उन कार्यवाही के दौरान स्वीकार किया

था कि रणजीत सिंह गैर-विस्थापित दावेदार के पास भूमि में 3/8 हिस्सा था। पृथक्करण अधिनियम की धारा 8 की उपधारा (2) में कहा गया है कि जहां अभिरक्षक ने अधिनियम के तहत यह निर्धारित किया है कि संबंधित कोई संपत्ति या उसमें कोई हित विस्थापित संपत्ति है, तो अभिरक्षक का निर्णय सक्षम अधिकारी के लिए बाध्यकारी होगा। विस्थापित संपत्ति के रूप में किसी भी संपत्ति के निर्धारण में एक जांच शामिल होगी कि क्या संपत्ति उस चरित्र की थी या नहीं और दोनों पहलुओं से संपत्ति को देखने की आवश्यकता होगी। अतिरिक्त अभिरक्षक का यह निर्णय कि संपत्ति में एक निश्चित हिस्सा खाली किया जाना है और दूसरा हिस्सा गैर-विस्थापित के रूप में है, सक्षम अधिकारी के साथ-साथ सहायक अभिरक्षक पर भी बाध्यकारी था जो सक्षम अधिकारी के समक्ष कार्यवाही में उपस्थित हुआ था। इन अधिकारियों में से कोई भी इस सवाल को नहीं उठा सका कि भूमि में रंजीत सिंह याचिकाकर्ता का हित खाली संपत्ति था या नहीं। सक्षम अधिकारी ने 'रंजीत सिंह ने खुद को खेवट नंबर 1 में 3/8 शेयर का मालिक होने का आरोप लगाते हुए' वाक्यांश का इस्तेमाल किया था। उनका आदेश 25 अक्टूबर 1955 का है। फिर भी, उन्होंने उस आरोप के बारे में कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया था। यह स्पष्ट है कि वह असहाय थे और डिप्टी कस्टोडियन के पहले के फैसले के कारण उनकी अपनी राय जो भी हो सकती थी, उसे स्वीकार करना पड़ा। उनके सामने पेश होने वाला सहायक संरक्षक अपने वरिष्ठ के आदेश पर सवाल उठाने की बेहतर स्थिति में नहीं था। इसलिए, रंजीत सिंह के हित की विस्थापित या गैर-विस्थापित प्रकृति को सक्षम अधिकारी के समक्ष उन कार्यवाहियों में निर्धारित नहीं किया जा सकता था और भूमि तब तक समग्र संपत्ति नहीं हो सकती थी जब तक कि अतिरिक्त संरक्षकों के निष्कर्षों को सभी संबंधित पक्षों द्वारा सही के रूप में स्वीकार नहीं किया गया होता। पृथक्करण अधिनियम के तहत उन कार्यवाहियों में, जो कुछ भी तय किया जा रहा था, वह संपत्ति के विभाजन का तरीका था और भूमि के टुकड़ों का सीमांकन था जो संपत्ति के विस्थापित और गैर-विस्थापित मालिकों को जाना था। पृथक्करण अधिनियम की धारा 18 के तहत अंतिम रूप केवल उन प्रश्नों को संलग्न कर सकता है जो उस अधिनियम के तहत कार्यवाही में तय किए गए थे, न कि उन प्रश्नों के लिए जो पार्टियों द्वारा उत्तेजित नहीं किए जा सकते थे या नहीं थे या सक्षम अधिकारी द्वारा तय नहीं किए गए थे। सक्षम अधिकारी या सहायक अभिरक्षक 10 मई 1952 के अपने आदेश में निहित अतिरिक्त अभिरक्षक के निष्कर्षों के पीछे नहीं जा सकता था। इसलिए, उन कार्यवाहियों में किसी भी निष्कर्ष या निर्णय का उत्तरदाताओं पर बाध्यकारी होने का कोई सवाल नहीं था। आर. एल. अग्रवाल और एक अन्य वी. दर्शन लाई (8) को याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील श्री लखनपाल द्वारा उद्धृत किया गया है, लेकिन अगर तथ्यों को ध्यान से पढ़ा जाए तो इस फैसले का हमारे मामले पर कोई असर नहीं पड़ता है। इस फैसले ने ग्रोवर के आदेशों के खिलाफ लेटर्स पेटेंट अपील का निपटारा कर दिया। जे, 1958 पीएलआर 669 में, द कस्टोडियन-जनरल, इवैक्यूप्रॉपर्टी और अन्य बनाम शांति सरूपा, (10) में ओवर-रेजिडेशन।

(12) याचिकाकर्ता के वकील ने इस आधार पर आग्रह नहीं किया कि भूमि उपयोग अधिनियम के तहत कार्यवाही किसी भी तरह से प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा आक्षेपित आदेश को पारित करने के लिए एक बाधा थी।

(13) मामले के कई भौतिक तथ्यों और परिस्थितियों के बारे में पक्ष विवाद में हैं। याचिकाकर्ताओं द्वारा स्थापित दस्तावेजों की वास्तविकता, कथित रूप से किए गए भुगतान के तथ्य या तारीखें, सत्यापन या उत्परिवर्तन दर्ज करने के समय राजस्व अधिकारी के समक्ष मुस्लिम मालिकों की उपस्थिति और सबूतों की प्रतीक्षा किए बिना उप संरक्षक जनरल द्वारा कार्यवाही को अचानक बंद कर देना, जिसके लिए याचिकाकर्ताओं को कई अवसर दिए गए थे, ऐसे मामले हैं जिन पर निर्णय नहीं लिया जा सकता है। मौखिक और वृत्तचित्र दोनों लंबे और जटिल साक्ष्य की जांच। यह इन कार्यवाहियों के कम्पास के भीतर नहीं है कि हम उस साक्ष्य की जांच करने और तथ्य के इन प्रश्नों का निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ सकते हैं। इसके अलावा, आक्षेपित आदेश याचिकाकर्ताओं के साथ किसी भी स्पष्ट अन्याय का कारण नहीं लगता है। उनके पास अभी भी पुनर्वास अधिकारियों को संतुष्ट करने का अवसर है कि उनके पक्ष में बिक्री वास्तविक और ईमानदार लेनदेन है। हमारे पास यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि ये अधिकारी इस तथ्य को ध्यान में नहीं रखेंगे कि कुछ सबूत वर्षों से नष्ट हो गए हैं या अस्पष्ट हो गए हैं। याचिकाकर्ताओं को केवल समय कारक का सामना नहीं करना पड़ता है क्योंकि कथित बिक्री की तारीखों के तुरंत बाद उन्हें अपने सबूत पेश करने के लिए दिए गए कई अवसरों का लाभ नहीं उठाया जा सका और उनके द्वारा सफलता की किसी भी डिग्री का उपयोग नहीं किया जा सका। कथित बिक्री की तारीखों के तुरंत बाद की गई उन कार्यवाही के दौरान याचिकाकर्ता जो भी सबूत जांचने में सक्षम थे, वे रिमांड के बाद उसी कार्यवाही को जारी रखने में अभी भी उपलब्ध होंगे।

(14) याचिकाकर्ताओं द्वारा अभिरक्षक विभाग के अधिकारियों के खिलाफ दुर्भावना के आरोप नहीं लगाए गए हैं, जिन्होंने विभाग के साथ शिकायत की थी, उन्हें अदालत के आदेश पर एक दूसरे के साथ प्रतिवादी के रूप में शामिल किया गया था क्योंकि रिट याचिकाओं में कुछ आरोप लगाए गए थे कि इन व्यक्तियों ने कुछ राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता या अन्य पुरानी दुश्मनी के कारण याचिकाकर्ताओं के खिलाफ रिपोर्ट की थी। श्री राम प्यारा इस मामले में अधिकांश सुनवाई में भाग ले रहे हैं ताकि निंदा या आलोचना के जोखिम से बचा जा सके क्योंकि उन्हें आशंका थी कि याचिकाकर्ताओं द्वारा उनकी अनुपस्थिति का उपयोग तथ्यों को गलत बताने या अतिरंजित करने के लिए किया जा सकता है। जब तक शिकायतकर्ता-प्रतिवादी इवैक्यूई प्रॉपर्टी, प्रतिवादी नंबर 1 के कस्टोडियन-जनरल को यह समझाने में सक्षम रहे हैं कि याचिकाकर्ताओं द्वारा स्थापित बिक्री में आगे देखने के लिए आधार हैं, तब तक हमें श्री राम प्यारा और कैरों परिवार के सदस्यों या संबंधों के बीच आपसी आरोप-प्रत्यारोप और शिकायतों को देखने की कोई आवश्यकता नहीं थी और यदि श्री राम प्यारा अपने मिशन में सफल होते हैं तो उन्हें पुनः प्राप्त करने का संतोष होगा। आम पूल के लिए विस्थापित संपत्ति का एक अच्छा सौदा है। बिक्री की वास्तविकता या

अन्यथा हालांकि एक ऐसा मामला है जिस पर पुनर्वास अधिकारियों द्वारा निर्णय लिया जाना बाकी है और लागत के सवाल को उस बिंदु पर अंतिम निर्णय का पालन करना चाहिए।

(15) हमारे रिट क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं हैं।

(16) ऊपर दिए गए कारणों के लिए, मैं रिट याचिकाओं को खारिज करता हूं और पार्टियों को उनकी लागत वहन करने के लिए छोड़ देता हूं।

न्यायमूर्ति पी.सी. पंडित- मैं सहमत हु।

आर. एन.एम.

पूर्ण बेंच

हरबंस सिंह से पहले सीजे, आरएस नरूला और प्रेरणा चंद जैन के समक्ष

अमर सिंह, - अपीलकर्ता,

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य, - उत्तरदाता

1970 के लेटर्स पेटेंट अपील नंबर 447

24 दिसंबर, 1,970

पंजाब यात्री और माल कराधान अधिनियम XXVI, जैसा कि हरियाणा राज्य को इसके आवेदन में संशोधित किया गया है) - धारा 3 (3), 4, परंतुक, 8 और 9 (7) - भारत का संविधान (1950)- अनुच्छेद 14, 245 (1), 246 (1), प्रविष्टि 23,

अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय, वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके, और किसी अन्य उद्देश्य के लिया इसका उपयोग नहीं किया जा सकेगा। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

रवि अमितोज़, प्रशिक्षु
न्यायिक अधिकारी